BE MAN
ਮਨੁੱਖ ਬਣੋ
انسان بنو

सम्पादक भाई जी नन्दूसिंह वेसीन निजामाबाद (दकन)
सहायक:—
भजनलाल वकील माधव कुंज, अलीगढ़ ।
बालमुकन्द गोविल (लल्ला) दयाल कम्पाउण्ड पेच जामाजी अलीग
देवीचरन मीतल मुख्तार, शिव भवन गांधीनगर, अलीगढ़ ।
गोपीलालजी कृषक Retired Director of Agri. खंडैहा अलं
मुरारीलाल जी B Sc. Retired E. E. देहरादून ।
पतरामजी गर्ग, मर्चेन्ट मौडिल हाऊज़ लखनऊ
हरचरनदास जी, Engineering Instructor Udeypur.
श्रीराम जी M Sc. आफीसर
ला० बालगोविन्द चक्रवन जी दयाल कम्पाउन्ड अलीगढ़
श्री प्रकाश जी गोविल दयाल नगर अलीगढ़ ।
प्रकाशक व मैनेजर:—मुन्शीलाल गोविल 'खुशदिल'
दयालकम्पाउण्ड पेच जामाजी अलीगढ़

* सूचना *

दवा बना कर बांटने का संस्कार शुरू से ही चला आता है। जो गुरु आदेशाधीन अब भी जारी है। कुछ अनुभव सिद्ध दवायें जो बांटी जाती हैं इस प्रकार हैं:—

वज्राभ्रक, ३२५ पुटी, पुरानी खांसी, दमां इत्यादि में ७ पुड़िया ही जादू का असर दिखाती हैं ।

बा० रत्नागिर का महाशक्ति फौलाद, गंधक, पारा, हरताल-वर्की. संखिया, भीमसेनी कपूर व घीग्वार के रस में २० भावना । सम्पन्न है बलवीर्य, मँदाग्नि, दिमागी कमजोरी आदिमें गुणकारीहै

इसके अलावा सुर्मा आंखों को, उदर विकार, दर्द पेट वगैरा को आक बटी, व आम नाशक चूर्ण, स्त्रियों के प्रसूत की गोली, व स्त्री पुरुषों के गुप्त रोगों व खाँसी, जाड़ा बुखार, आदि की दवायें भी बांटी जाती हैं। जिगर, तिल्ली कैसा ही पेट क्यों न घेर रक्खा हो, की पेटेन्ट दवा भी मिलती है।

पत्र व्यवहार को जवाबी कार्ड व दवा के लिए डाक खर्च भेज कर लाभ उठायें। भवदीय:—बालमुकन्द गोविल

वार्षिक मूल्य ३

राधास्वामी दयाल की दया। राधास्वामी सहाय

मनुष्य बनो

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

वर्ष ३ | फरवरी १९५५ फाल्गुन सं० २०११ | सं० ५

—❀ प्रार्थना ❀—

तुम व्यापक चर और अचर में हो, किस जगह ढूँढ़ने जाऊँ मैं।
सब नाम और रूप तुम्हारे हैं, किस नाम रूप को ध्याऊँ मैं ॥
तुम शब्द, स्पर्श में रूप में हो, तुम रस में हो तुम गन्ध में हो।
तुम देश में, काल में, वस्तु में हो, तुमको क्या कह कर गाऊँ मैं ॥
यह जीव जन्तु सत्ता हैं तुम्हारे, लोक परलोक सभी तुम हो।
फिर किस को मन से छोड़ूँ मैं, और किसको मन से पाऊँ मैं ॥
अज्ञान में हो, तुम ज्ञान में हो, विद्या में अविद्या में भी हो।
किसको मैं मुँह से बुरा कहूं, और अच्छा किसको बताऊँ मैं ॥
कहने वाले में रहते हो, सुनने वाले में बसते हो।
किससे मैं तुम्हारी दूं उपमा, किस किस का भेद सुनाऊँ मैं ॥
आकाश, पवन, अग्नि, पृथ्वी, जल, रूप तुम्हारे हैं स्वामी।
स्वामी में, सेवक में, तुम हो, किस विधि से तुम्हें मनाऊँ मैं ॥
राधास्वामी का रूप लखा, चेतन विशेष का दरश मिला।
सामान्य को तजकर इस विशेष से, सच्चा नेह लगाऊँ मैं ॥

"मनुष्य बनाने का पूर्ण नियम (६) तथा मन का महत्व'

"एक सख्श इक डाक्टर के आया पास।
और अदब के साथ यूँ की इल्तमास॥
मेरा रिश्तेदार है इक जाँबलब।
दर्द मैदा की इसे शिद्दत है अब॥
डाक्टर ने जब यह हाल उससे सुना।
उसको आंखों के लिए सुरमा दिया॥
होके हैराँ उसने फिर यूँ अर्ज़ की।
आपको सूझी यह कैसी मसख़री॥
डाक्टर बोला कि मैं हँसता नहीं।
नुक़्स है उसकी नज़र में बिलयक़ीं॥
हाथ में आता है जो खाता है वह।
इस लिए आख़िर में दुख पाता है वह॥"

यद्यपि यह एक मज़ाकिया कविता है परन्तु इसके भीतर सचाई छुपी हुई है। इस सचाई के अभाव में प्रत्येक मनुष्य मनुष्यता से गिरकर पशुओं के जैसे नीच कर्म करता है। और नाना प्रकार के दुख भोगता है। मनुष्य इस सचाई के होने से ही मनुष्य बनने व मनुष्य कहलाने के योग्य है। मनुष्य का मनुष्यत्व इस सचाई के कारण से ही है। मनुष्य और पशु, ज्ञानी और अज्ञानी का अन्तर इस सचाई के द्वारा ही होता है। यदि यह सचाई लुप्त हो जाय तो फिर ज्ञानी और अज्ञानी की पहँचान बहुत कठिन हो जायगी। इस सचाई का नाम मन है और इसी को दिव्य दृष्टि भी कहते हैं। मन आँख के समान है। जिसकी आँख फूट जावे वह सच और झूँठ की पहँचान नहीं कर सकता। अँधा

धुन्ध प्रत्येक वस्तु का सेवन करने से वह दुखी होता है । इसके विपरीत जिसकी आँखें प्रकाशवान् हैं वह सच और झूँठ का निर्णय करके सच को धारण करता है और झूँठ को छोड़ देता है। और सत्य स्वरूप बनकर परमानन्द को भोगता है । मनुष्य का मन स्वर्ग और नर्क के फाटक के समान है। यदि मनुष्य का मन शुद्ध, पवित्र और नेक है, अपनी और दूसरों की अच्छाई को सोचने वाला है, सचाई का अभिलाषी है, झूँठ का शत्रु है, तो वह स्वर्ग में प्रवेश करके मोक्ष पदवी दिलाता है । इसके विपरीत यदि मनुष्य का मन अशुद्ध, दूषित और बदनीयत है, अपनी व दूसरों की अच्छाई सोचने की योग्यता नहीं रखता झूँठ का इच्छुक और सत्य का शत्रु है, तो वह बजाय स्वर्ग के नर्क में धकेल कर बन्धन का मूल कारण बनता है। मन ही बन्धन व मोक्ष का मुख्य कारण है । मन के समझ लेने से मनुष्य बन्धन व मोक्ष को समझ सकता है। और पूर्ण स्वतंत्र बनकर इच्छानुसार सुख भोगता है। मन से ग़ाफ़िल रहने वाला मनुष्य मनुष्यता से गिर कर अधोगति को प्राप्त होता है । मन की विशेषता को भली भाँति समझ लेना और उससे इच्छानुसार कार्य लेना ही मनुष्य के जीवन का सच्चा उद्देश्य है। मन की बेसमझी ही उन्नति के मार्ग में बाधक है। मन को समझ लेने वाला मनुष्य तुरन्त उन्नति के शिखर पर पहुँच कर देवता बन जाता है ।

जिस प्रकार स्वच्छ साबुन से शरीर साफ़ हो जाता है, उसी प्रकार सद्विचारों से हृदय शुद्ध हो जाता है । जितना अधिक निर्मल साबुन होता है उतना ही अधिक शरीर निर्मल हो जाता है। इसी प्रकार मनुष्य के जितने ही अधिक शुद्ध विचार होते हैं उतना ही अधिक उसका हृदय शुद्ध बन जाता है ।

'शिवरात्रि–सूचना'

जिस विचार से मैंने शिवरात्रि का शब्द प्रयोग किया है उस विचार ने मेरे जीवन में एक सनसनी भी पैदा की। इस दिन दातादयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज के पवित्र शरीर ने जन्म लिया था। उस पवित्र व्यक्तित्व ने मुझ बावले को जो आवागमन से छुटकारा, पूर्ण पुरुष से मिलने का उत्कट अभिलाषी, संसार–चक्र से दुखी और उसमें सुखी रहने का इच्छुक था, चरण-शरण प्रदान की और सुरत शब्द योग की शिक्षा का संस्कार दिया था। जीवन सचाई पसंद था यद्यपि उस पर धार्मिक, विशेषत: सनातन धर्म के प्रभाव अधिक थे। इसलिये एक भाव था कि जो कुछ यथार्थ ज्ञान इस सुरत–शब्द–योग के साधन के पूर्ण होने पर समझ में आयेगा संसार के प्राणियों को बता जाऊँगा। विशेषत: राधास्वामी मत की पुस्तकों में समस्त धर्म, पंथ और सम्प्रदाय मतमतान्तर का खण्डन था, केवल पूर्ण सतगुरु की भक्ति और धुन आत्मिक नाम की भक्ति को ही प्रत्येक प्रकार से मुख्य माना गया है। आज इतनी ऊँची आयु में पहुँच कर मैंने यह मान लिया, समझ लिया, जान लिया पहुँचान लिया कि इस युग में केवल पूरे गुरु की भक्ति और धुन आत्मिक नाम भक्ति ही मानव क्लेशों, आपत्तियों, भ्रमों, संशयों, भ्रांतियों जिनका मूल कारण धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, चारित्रिक, आत्मिक अज्ञान है, का इलाज हो सकता है। यदि यथार्थ गुरु भक्ति और नाम-भक्ति की सच्ची समझ मिल जाय और इस सच्ची समझ को व्यक्त करने के लिए दातादयाल और हुजूर साँवलेसाह व्यास वालों की आज्ञानुसार तथा अपने कर्मभोग के प्रभाव से इस शिव रात्रि

के अवसर पर स्पष्ट और खुले शब्दों में अपना अनुभव व्यक्त करूँगा।

मैं अपनी स्थिति स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैं किसी मत मतान्तर, पंथ, समुदाय, धर्म इत्यादि से बँधा हुआ नहीं हूँ। मेरा अनुभव केवल वह हो जिसको जानने से मनुष्य के संशय, भ्रम और संदेह दूर होते हैं और वर्त्तमान समय के बुद्धिमान पुरुषों को और अन्य जिज्ञासुओं को जीवन व्यतीत करने का सही मार्ग मिल सकता है। इसलिये वह सामाजिक, राज्यकीय, घरेलू धार्मिक और आत्मिक जीवनों में अपना जीवन सुख पूर्वक व्यतीत कर सकते हैं। यह मेरी अपनी आज़माई और निज अनुभव की बात होगी। पुस्तकों या दूसरों की सुनी सुनाई नहीं होगी। मेरे यहाँ नास्तिक, आस्तिक अर्थात् प्रत्येक विचार वाले व्यक्ति का आदर है। यदि कोई जिज्ञासु हो तो वह दयालधाम डा० दयालनगर जिला अलीगढ़ में सतसंग के लिये आ सकता है। सतसंग २० फरवरी की रात और २१ फ़रवरी के दिन को होगा।

सम्भव है मुझे राधास्वामी मत का पैरोकार माना जाय, क्योंकि मैं इस शब्द का सहारा लेता हूँ उसका उत्तर सुनो। इस मत और इस नाम की असली समझ ने मुझे यह हौसला दिया है कि मैं किसी मत, सोसाइटी, धर्म इत्यादि के पक्षपात से स्वतन्त्र हो गया हूँ। यह इस मत और नाम की कृतज्ञता है मैं कृतघ्नी नहीं हूँ।

"कामी तरे, क्रोधी तरे, पापी तरे अनन्त।
आन उपासक कृतघन तरे न नाम रटंत॥

'ओजस'

(हुजूर दातादयाल शिवव्रतलाल जी के वचनों का दर्शन)

शरीर की समस्त शक्तियाँ ओजस पर निर्भर हैं, जो मस्तिष्क में इकट्ठा हुआ करता है। जिसमें जितनी ओजस की मात्रा होगी उतनी ही उसमें शक्ति तथा दृढ़ता उपस्थित होगी, और उतनी ही अक़्ल, बुद्धी, आत्मिक शक्ति तथा सोच विचार की योग्यता आयेगी। जिस प्राणी को आत्मिक शक्ति से बलवान देखो, जिसके विचार बहुत पवित्र हों, जिसकी वाणी में रस हो, जिसकी बातों में चुम्बक के समान आकर्षण शक्ति हो, जो सबको अपनी ओर खींच सके, समझ लो उसमें ओजस काफ़ी मात्रा में उपस्थित है। इस शक्ति वाले मनुष्य के लिये वाणी की बनावट की आवश्यकता नहीं है और न नियम के पालन की आवश्यकता है। वह जो कुछ अपने टूटे फूटे शब्दों में कहेगा उसमें विशेष जीवन और आकर्षण होगा। उसका ध्यान भाषा की बनावट की ओर नहीं जायगा। विचार निस्सन्देह सुन्दर और प्रभावशाली होंगे। वह जहाँ रहेगा संसार को केवल अपने विचारों से हिला देगा। प्रत्येक प्राणी में न्यून और अधिक ओजस हुआ करता है परन्तु जो वीर्य को अधिक सुरक्षित रखता है और साथ ही अपने अन्तर में किसी प्रकार का अभ्यास भी किया करता है; उसमें अधिक ओजस उत्पन्न होने की आशा होती है, रस, रक्त, वीर्य यह सभी ओजस में परिवर्तित होते रहते हैं। जिस प्रकार जल भाप बनता है और फिर सूक्ष्म रूप धारण करता है उसी प्रकार समस्त बिजली की शक्तियाँ चुम्बक के आकर्षण की शक्ति में परिवर्तित होकर ओजस का रूप धारण करती हैं। जो कोई अपने आप को बलवान बनाना चाहे वह अपने अन्तः में अधिक से अधिक ओजस उत्पन्न करने का विचार रक्खे

मानव-शरीर वास्तव में बिजली की शक्तियों का बलवान और बहुत बड़ा फल है। जिसने इस रहस्य को समझ लिया वह शरीर को रखते हुए इस प्रकार का बन जाता है कि उस पर अग्नि, जल, बन्दूक की गोली और तलवार की धार कोई असर नहीं कर सकती। हनुमान जी बज्र अँगी कहलाते हैं। उनमें यह शक्ति अधिक थी क्योंकि वह प्रारम्भ से ही ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते थे। इसी कारण उन पर किसी शस्त्र का कोई असर नहीं हो सकता था। जो ब्रह्मचारी नहीं है वह योग का यह पद प्राप्त नहीं कर सकता। यह सत्य है कि योग गृहस्थी भी करते हैं परन्तु उनको भी नियमानुसार भोग करने का आदेश है अन्यथा व्यभिचारी के लिये योग का समझना ही कठिन है। ब्रह्मचर्य्य के महत्व पर अनेक भाषण और व्याख्यान सुनने में आते हैं परन्तु उन वक्ताओं में एक भी ऐसा न मिलेगा जो वास्तविकता का ज्ञान रखता हो। लक्ष्मण जी ओजस वाले थे यह भी ब्रह्मचारी थे। यदि यह पुरुषोत्तम राम के साथ न होते तो लंका विजय कभी न होती। लंका विजय का टीका केवल लक्ष्मण जी के माथे -- लगाया जाता है।

एक समय की बात के अगस्त्य ऋषि श्री रामचन्द्र जी से मिलने आये। जब उनकी ति कर चुके तो कहने लगे कि वास्तव में लक्ष्मण ने ही लंका विजय की है। राम ने आश्चर्य से पूछा "यह आप क्या कह रहे हैं ?" ऋषि ने उत्तर दिया "लक्ष्मण से अधिक ब्रह्मचारी अन्य कोई आपकी सेवा में उपस्थित न था" इन्द्रजीत मेघनाद रावण का पुत्र इतना बलवान था कि कोई भी व्यक्ति उसको परास्त नहीं कर सकता था। उसने इन्द्र अर्थात् बिजली की शक्ति को प्रत्येक रूप से अपने में समाविष्ट कर रक्खा था। रावण जानता था कि जब तक इन्द्रजीत जीवित है कोई लंका पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता। रामायण में जो अनुष्ठान-यज्ञ का उल्लेख है उसका तात्पर्य यथार्थ में यह था कि वह संकल्प-शक्ति

को दृढ़ शक्तिशाली बनाने के लिये एकान्त-सेवन करते थे और जब कभी उनको इस बात का ध्यान हुआ, गुप्तचरों से समाचार पाकर राम के दूतों ने उनका यज्ञ विध्वंस कर दिया। परन्तु मेघनाद में यह दोष था कि उसने स्त्री कर रक्खी थी। लक्ष्मण जी विवाहित होते हुये भी पूर्ण बाल-ब्रह्मचारी एवं जती थे। यह ओजस कुमारियों में अधिक होता है और यही कारण है कि अब तक हिन्दुओं में कुमारी कन्याओं के हाथ के कातें हुये यज्ञोपवीत (जनेऊ) को धारण करने की प्रथा है जिससे यज्ञोपवीत धारण करने वालों को उनके पवित्र ओजस की कुछ मात्रा मिल जाया करे। जब कुमारियाँ विवाहित हो जाती हैं फिर ओजस की मात्रा उनमें इतनी नहीं बनती। इसलिये अब तक पौराणिकों में कुमारी कन्याओं की पूजा करने की प्रथा है।

कुमारों (अविवाहित) लड़कों में भी ओजस बहुत होता है। परन्तु इसकी रक्षा नहीं होती। वह पारस्परिक संगति और सांसारिक विचारों से भ्रष्ट हो जाते हैं। वह मानसिक ब्रह्मचर्य का ध्यान तक नहीं रखते।

हिन्दुओं की प्राचीन जातीय सभ्यता में स्त्रियों की पूरी २ निगरानी हुआ करती थी। लक्ष्मण जी में यह ओजस अधिक था और यही कारण है कि अन्य योधाओं की अपेक्षा उनमें सहन-शक्ति अधिक थी। आज कल के विलास विद्यार्थी इस बात पर हँसी उड़ायेंगे, परन्तु वास्तविकता यह है कि लक्ष्मण जी ने १४ वर्ष तक लगातार पृथ्वी से पीठ नहीं लगाई; हाथ में तीर कमान लिये हुये रात भर पहरे का कार्य करते रहे। यह सेवा भाव और तप कहाँ किसी में दिखाई देगा ? इसलिए ऐसे जती के सम्मुख बनावटी बिजली की धारें नहीं ठहर सकती थीं क्योंकि उनमें विशेष रूप से वास्तविक बिजली की शक्ति थी। यह सत्य है कि प्रारम्भिक युद्ध में उनको शक्ति-बाण लगा था। यदि यह शक्ति-बाण किसी अन्य

को लगता वह जीवित नहीं रह सकता था । इनमें ब्रह्मचर्य के प्रताप से सहन-शक्ति अधिक थी जिसके कारण जीवित रहे; और दूसरे ही दिन युद्ध-क्षेत्र में आकर डट गये। सर्प में ओजस की मात्रा अधिक होती है। अलंकार के रूप में कवियों ने इसी कारण शेष नाग के सिरों का विष्णु के सर पर छत्र बनाया है। ओजस में वह शक्ति है जो वाह्य संसार को नियम-वद्ध रखती है और सबको अपनी ओर खींच रखती है। इसी प्रकार मानव के शारीरिक संसार में मस्तिष्क के ओजस की दशा है। यदि लक्ष्मण जी न होते तो लंका कभी विजय नहीं हो सकती थी क्योंकि रावण जैसे विशाल मस्तिष्क वाले फ़िलासफर ने समस्त बनावटी और प्राकृतिक सामग्री से उसको पुष्ट बना रक्खा था। उसके पास इन्द्र-जीत और कुम्भकर्ण से योधा मौजूद थे जिन्होंने योग के रहस्य को समझते हुये अपने आप को पत्थर और लोहे की भाँति बलवान बना रक्खा था। लक्ष्मण जी जैसा योधा उनमें एक भी नहीं था। इसलिये उनको मुंह की खानी पड़ी। राम और उनके साथी अगस्त्य ऋषि द्वारा मौखिक लक्ष्मण जी की प्रशंसा सुनकर अति प्रसन्न हुये।

जो मनुष्य योगाभ्यासी होने की इच्छा रखता है वह सबसे पहिले वीर्य का रक्षक बने। चाहे स्त्री हो या पुरुष सब ऐसा कर सकते हैं। सर्व प्रथम शारीरिक विषय-विकारों को दमन करने की आवश्यकता है। यदि प्रारम्भिक अवस्था ही ग़लत हुई तो उसका परिणाम भी ग़लत ही होगा। ऐसे पुरुष में न तो शक्तियाँ ओजस के रूप में परिवर्तित होंगी और न आत्मा का ही विकास होगा। जिसमें ओजस नहीं है उसका चरित्र भी पुष्ट न होगा। अशक्त प्राणी की दृष्टि ज्योंही स्त्री के रूप पर पड़ी वह गिर जागया। बहुत से पशु-तुल्य प्राणी तो स्त्री को देखकर उसी प्रकार हिनहिनाने लगते हैं जैसे घोड़ा घोड़ी को देखकर हिन हिनाता है। उनमें न

चारित्रिक शक्ति आती है, न निर्भयता और निस्संकुचिताई होती है और वह शीघ्र गिर जाते हैं। ध्यान पूर्वक हिन्द्-इतिहास के पृष्ठ खोल कर देखो क्या कहीं ब्रह्मचारी के अतिरिक्त अन्य किसी ने भी ऐसे महान् कार्य किये हैं ? तुमने सम्भवतः भीष्मपितामह का हाल सुना होगा। यह राज-ऋषि थे क्योंकि राज-योग के अभ्यासी थे। राज शब्द ही सहनशीलता समाविष्टत्व तथा शासन का द्योतक है। जिसने अपने समस्त शारीरिक केन्द्रों की शक्तियों पर अधिपत्य जमा लिया है वही राजर्षि या राज-योगी होता है। भीष्मपितामह की अनुशासन-प्रणाली को शान्ति पूर्वक व ध्यान पूर्वक अध्ययन करो। क्या कोई व्यभिचारी ऐसी महान् शिक्षा दे सकता है ? बुद्ध भगवान यद्यपि विवाहित थे किन्तु अन्त में उन्होंने भी ब्रह्मचारी बन कर ओजस की मात्रा को बढ़ा लिया और संसार की काया पलट करदी। स्वामी शंकराचार्य जी ब्रह्मचारी थे ऐसा कौन व्यक्ति है जो इस महात्मा के मस्तिष्क से निकले हुये विचारों का आदर नहीं करता ? कबीर साहब भी ब्रह्मचारी थे। वे स्पष्ट शब्दों में आदेश देते हैं कि मोक्ष और योग विषयी के लिए नहीं हैं। इसलिये अभ्यासियों को इस बात की आवश्यकता है कि वह अपने ब्रह्मचर्य का विधि पूर्वक पालन करें और अपने अन्तर में ओजस भी मात्रा को अधिक से अधिक उत्पन्न करने का यत्न करें जिससे उनका अभ्यास सुगमता से सफल हो सके और उनका जीवन इष्ट को सुगमता से प्राप्त कर सके। कबीर साहब की अनुभवी वाणी है जो सोचने समझने के योग्य है:—

"नारी की झाँई पड़त, अंधे होत भुजङ्ग।
कबीर उनको कौन गति, जो नित नारी के सङ्ग ॥ १ ॥
कामी कुत्ता तीस दिन, अन्तर होय उदास।
नर कामी कुत्ता सदा, छै ऋतु बारह मास ॥ २ ॥

जहाँ काम तहाँ नाम नहिं, जहाँ नाम नहिं काम।
दोनों कबहू ना मिलें, रवि रजनी इक ठाम ॥ ३ ॥
कामी कबहुं न गुरु भजै, मिटै न संशय सूल।
और गुनह सब बख्शि हूँ, कामी डाल न मूल ॥ ४ ॥
छोटी मोटी कामिनी, सबही विष की बेल।
बैरी मारै दाव से, यह मारै हँस खेल ॥ ५ ॥
नारी निरख न देखिये, निरखन कीजै दौर।
देखत ही से विष चढ़ै, मन आवै कुछ और ॥ ६ ॥
गाय भैंस घोड़ी गधी, जामंदर में बास।
जो जननी हो आपनी, तऊ न बैठो पास ।७॥

विचारों को पवित्र रक्खो। मन,वचन, कर्म से शुद्ध रहो। मानसिक ब्रह्मचर्य का ध्यान रहे। तब तुम में ओजस अधिकता से उत्पन्न होगा जिससे तुम्हारे विचार और भाव उच्च होंगे। आत्मा उच्च स्थानों का आनन्द लेगी। आत्मिक अवस्थाओं को क्रम से सुगमता पूर्वक तै करते हुए तुम एक दिन ध्रुव-पद में प्रवेश कर सुख और शान्ति के अधिकारी हो जाओगे। गुरु तुम्हारा कल्याण करें। राधास्वामी ॥

(प्रेषक नन्दूभाई निज़ामाबाद, दकन)

प्रकृति को अपना कार्य आप करने दो।

(लेखक—महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज)

महात्मा मलूक दास जी की वाणी है:—

अजगर करें न चाकरी पंछी करें न काम।
दास मलूका कह गये सबके दाता राम ॥

यह वाणी इतनी सच्ची है कि सिवाय नादान के और

दूसरों को इसकी सचाई में संशय न होगा। पर्वत पर वृक्ष खड़े हुए हैं कौन उनको सींचता है ? कौन उनको पानी देता है ? परन्तु वह हरे भरे रहते हैं:—

तुलसी विरवा बाग़ के सींचे ते कुम्हिलाँय।
राम भरोसें जो रहें पर्वत पर हरियांय॥

गुलाब का पौदा किस प्रकार कौपल निकालता है, कैसे धीरे धीरे उसमें कलियाँ आती हैं, और पंखड़ियाँ निकलती हैं और जिस समय फूल खिलता है आस पास के समस्त मैदान उसकी सुगन्धि से सुगन्धित हो जाते हैं। यह न कार्य्य करता है न परिश्रम करता है, न उसको किसी का भय है न किसी से कुछ लेना देना है, उगता खिलता है और सुगन्धि फैलाता है उसके प्रत्येक अणु में ईश्वर की प्रकृति पर विश्वास है और वह जानता है ईश्वर आप उसकी रखवाली करेगा।

प्रकृति में जो कार्य हो रहा है सब इसी प्रकार का है। सब जगह विश्वास का दृश्य दृष्टिगोचर हो रहा है। एक मनुष्य जाति ही ऐसी है कि जिसमें संशय और भ्रम की उत्पत्ति हो जाने से इस विश्वास को धक्का लगा और उसी समय से घोर परिश्रम और रञ्ज व दुख की परिस्थिति संसार में प्रगट हुई—मनुष्य दूरदर्शी नहीं है तथा संकुचित विचार वाला वह समझता है प्रकृति उसके आश्रित है—उसकी समझ में यह बात बैठ गई है कि यदि वह परिश्रम न करेगा तो उसको रोटी न मिलेगी और इस समझ बूझ व विवेक का परिणाम यह हुआ कि ईर्षा व द्वेष की चिनगारियाँ हृदय में भवक उठीं—लड़ाई झगड़े होने लगे, रक्तपात हुआ—रक्त नद बहे और संसार की दशा ऐसी हो गई जैसी कि हम आज उसको देखते हैं। ईश्वर पर विश्वास नहीं रहा। प्रकृति की अनन्त शक्ति पर संशय उत्पन्न होने लगे। ईश्वर का कार्य मनुष्य ने लेना चाहा और जब उसने अपनी सीमित बुद्धि के अ

सार उसमें संशोधन करना चाहा तो वह अपने व्यक्तित्व को स्वार्थपरता के दोष से सुरक्षित न रख सका परिणाम में दुःख व संकट उठाने पड़े और यथार्थ पथ से दूर जा पड़ा–यदि वह इतना समझ लेता कि पुत्र के जन्म से पूर्व माँ के स्थन में जो दिव्य शक्ति दूध उत्पन्न करती है वह किस प्रकार अपनी सृष्टि को एक क्षण के लिये भी भुला सकती है। परन्तु उसने ऐसा विचार नहीं किया और समझ लिया कि यदि मैं हाथ न लगाऊँगा तो यह सृष्टि पूर्ण न होगी उसने स्वार्थ का हाथ लगाया और उसका परिणाम तुम देखते हो। यदि वह ईश्वर की अपार व अनन्त शक्ति पर विश्वास रखता हुआ प्राकृतिक नियम से फलता और फूलता तो उसको भय व आशा से छुटकारा मिलता और गुलाब के फूल की भांति उसकी सुगन्धित से संसार का मस्तिष्क सुगन्धित बन जाता परन्तु खेद है कि उसने इस प्रकार विश्वास नहीं किया और कुचाल चलकर वह ठोकर खाई कि मुँह के बल जा गिरा और आज सृष्टि उसके दुख के स्वर से गूंज रही है।

तुम प्रश्न करोगे (और तुम्हारा प्रश्न करना अनुचित भी नहीं है) कि क्या हममें से किसी को रोटी के लिये परिश्रम न करना चाहिये? क्या हम संसार में अपाहज बनकर रहें? मैं उत्तर दूँगा कि जहाँ जीवन प्राकृतिक है वहाँ परिश्रम और अपाहजपन का प्रश्न ही नहीं उठता। स्वयं प्राकृतिक ढङ्ग पर समस्त कार्य होता रहता है और एक बड़ी कल के पुर्जों की भाँति समस्त सृष्टि आपस में एक दूसरे के साथ गुथी हुई कार्य करती रहती है। वह कार्य उनका नहीं बल्कि प्रकृति का है और इस कारण किसी को कष्ट नहीं होता क्योंकि दुख केवल स्वार्थ और अहंकार में है, और जहां अहंकार आजाता है वहीं पर परिश्रम व अपाहजपने का प्रश्न उत्पन्न होता है। प्रकृति में ऐसी पूजा का कोई स्थान नहीं है।

आदम हौवा को साथ लिये हुए अदन के बाग़ के मज़े लूटता था, न तन पर कपड़ा था न रहने के लिये झोंपड़ा था। जीवन प्राकृतिक था। प्रसन्न था, चिन्ता नहीं थी। शैतान ने उसको बहकाया और उसने अक़्ल के वृक्ष का फल खा लिया। उसको लज्जा आई और उसने समझा कि मैं नंगा हूँ। पत्तों से अपने तन को ढक लिया और वृक्ष की आड़ में जाकर छुप रहा। खुदा ने पूछा कि आदम तू कहाँ है ? उसने कहा कि मैं पेड़ की आड़ में छुपा हूँ क्यों कि मैं नंगा हूँ खुदा बोला मालूम हो गया। नादान ! तूने अक़्ल के दरख़्त का फल खा लिया। जा, बाग़ो अदन से दूर हो जा। और पृथ्वी पर परिश्रम करके रोटी कमा खा। और अब तुझको नाना प्रकार के कष्ट भोगने पड़ेंगे और वह वहां से नीचे गिराया गया और आज तक दुखी है।

यह कहानी है और सच्ची कहानी है। नाम के लिये भी इसमें झूँठ की मिलावट नहीं है। इससे कोई प्रयोजन नहीं कि यह कहानी यहूदियों की है या आर्य्यों की इसका उल्लेख तोरियत में है या सतपथ ब्राह्मण में है यह अक्षरशः सच्ची है। जब तक मानव जीवन प्राकृतिक था वह ख़ुदा के साथ था और जब से तुच्छ-बुद्धि और अहंकार पैदा हुआ। वह प्रकृति की गोद से नीचे गिराया गया और दुखी है। बात भी सही है। यदि तुम रात दिन "मैं, मैं" करते रहते हो प्राकृतिक जीवन के रहस्य को नहीं समझते तो तुमको इस 'मैं' के लिये दुख भोगने पड़ेंगे। युद्ध क्षेत्र में जो सिपाही सेनापति की आज्ञानुसार तोप और बन्दूक चलाता है उससे कोई उसका कारण नहीं यदि वह सेनापति के कहने से अपने राजा को ही मार दे तब भी उससे कोई न पूछेगा उसका उत्तर-दायित्व सेनापति पर ही होगा। यदि यह सिपाही फौजी क़ानून के नियम का पालन न करे तो फौजी अदालत उसको जान से मार देगी। सदैव यही दशा मानव-समाज की हो रही है और समस्त

सृष्टि प्रकृति के नियमानुसार चल रही है, वृक्ष, बेल बूटे, नदी, नाले, पर्वत, पशु आदि सब एक नियम में गुथे हुए हैं, किसी में 'मेरा पना' (अहंकार) नहीं है और उनके समीप दुख सुख का प्रश्न नहीं उठता। परन्तु मनुष्य रात दिन मेरा तेरा पना करता रहता है और दुःख भोगता है। वह ईश्वर पर विश्वास नहीं रखता, आपा पंथी बन गया है। और उसका परिणाम भोग रहा है।

"मोर तोर की जेबरी, बट बांधा संसार।
दास कबीरा क्यों बंधे जाके नाम अधार॥"

यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारा जीवन पवित्र और निर्मल रहे तो दृष्टि को, हृदय को और मस्तिष्क को फैलाकर प्रकृति को अपना कार्य्य आप करने दो। हस्तक्षेप न करो। और हृदय रूपी खेत में ईश्वर के विश्वास के बीज को बोओ जिससे कि वह समय पर पत्ते फल फूल उत्पन्न करे।

ईश्वर की अपार और अनंत शक्ति पर ऊट पटांग प्रश्न न उठाओ-इसका पार पाना तुम्हारी सीमित बुद्धि का कार्य नहीं है। देखो ! फूल के वृक्ष कैसे उगते हैं ? कैसे उनमें पत्ते आते हैं ? किस प्रकार फल खिलते हैं? फूल के जीवन के सम्बन्ध में तुम भला क्यों प्रश्न करते हो ? प्रकृति के नियम को समझो। ईश्वर-विश्वास के पात्र बनो धर्म के सूर्य्य में अपनी दृष्टि जमाओ, बरकत की बूंदों को जो आकाश से गिर रही हैं लेकर अपने शरीर में रमालो, आशा रूपी इन्द्र धनुष के रूप रंग को देखकर खुशियाँ मनाओ, जो उच्च स्वर से वर्षा होने की सूचना देता रहता है। और तुम तुरंत ही फूल के वृक्ष की शाखाओं की भाँति उभरने लगोगे। और तुम में दया, धर्म, सचाई के पुष्प आ जावेंगे। जीवन प्राकृतिक हो जावेगा। दुख से मुक्ति मिलेगी और समस्त शिकायतें दूर हो जावेंगी। तुम कार्य तो उस समय भी करोगे परन्तु वह तुम्हारा अपना कार्य्य न होगा, [illegible] का कार्य्य होगा। और उसके लिये तुम उत्तरदायी कहीं भी

न होगे। यमदूत का खटका उसके लिये है जो अपना कार्य्य करता है जिसका जीवन स्वयं ईश्वर का जीवन है उसको यमदूत कैसे पकड़ेंगे ? क्या कोई ईश्वर को पकड़ सक्ता है ? आज्ञाकारी सिपाही से कभी पूछताछ नहीं होती क्योंकि उसके द्वारा रक्तपात उसके अपने स्वार्थ के लिये नहीं है। जिनका जीवन ऐसा हो जाता है वह मलूक-दास की भाँति प्रसन्नता के गीत गाते फिरते हैं कि अजगर कार्य्य नहीं करता इत्यादि इत्यादि।

अंधकार की ओर न देखो। प्रकाश की ओर पग धरो। क्या तुम वृक्षों को नहीं देखते ? वह प्रकाश ही की ओर झुके रहते हैं। मेरा तेरा पना अंधकार है। ईश्वर का विश्वास प्रकाश है ईश्वर स्वयं प्रकाश है। उससे उसका प्रकाश मांगो। उसकी शक्ति से शक्तिवान बनो तो फिर संसार में शान्ति ही शान्ति होगी।

इस प्रकार के विचार का एक व्यक्ति लाखों और करोड़ों मेरे तेरे पने करने वालों से अधिक शक्तिवान हैं। उसके पीछे उसी प्रकार ईश्वर समस्त शक्ति रहती है जैसे ज्वारभाटा की लहरों के उठते समय समुद्र की शक्ति लहरों के पीछे रहती है इसको न कोई हरा सक्ता है न कोई मार सक्ता है। तोप व बंदूक की गोली उस पर असर नहीं करती। और उस एक का कार्य इतना विशाल होता है जितना सैकड़ों, हज़ारों, लाखों और करोड़ों का भी नहीं होता। राज्य मिट गये, राज-परिवार समाप्त हो गये विद्या-भंडार नष्ट कर दिये गये परन्तु आध्यात्मिक झंडे अब तक संसार में गढ़े हैं क्योंकि इनकी स्थापना ऐसी महानात्माओं ने की थी जिसमें मेरा तेरा पना नहीं था। इनका जीवन प्राकृतिक था। उन्होंने जो कुछ सोचा समझा, किया कराया वह सब उनका अपना नहीं था बल्कि देश, काल और वस्तु के अनुकूल था। प्रकृति चाहती थी कि इस प्रकार का कार्य हो। उन्होंने कार्य किया विरोध हुआ, झगड़े हुये, कष्ट और आपत्तियाँ सहीं फांसियों पर लटके, सूलियों पर चढ़ाये गये परन्तु

क्या वह मर गये ? क्या अंधकार को प्रकाश पर कुचलने वाली विजय प्राप्त हो गई ? समय से पूछो और वह तुमको इसका संतोषजनक उत्तर देगा। यह वह सराहनीय आत्मायें थीं जो संसार की कल्पित मृत्यु के पश्चात् भी इतना चमत्कार दिखाती हैं। यह वास्तविक और सच्ची आत्माऐं थीं।

चढ़ा मंसूर सूली पर पुकारा इश्क बाज़ों को।
यह उसके नाम का जीना है आये जिसका जी चाहे ॥

मित्रो ! ईश्वर पर विश्वास रक्खो। अपने जीवन को प्राकृतिक बनाओ, सादा जीवन व्यतीत करते हुए उच्च विचारों का ध्यान करना सीखो। और तुम्हारा हमारा और समस्त संसार का कार्य्य प्रकृति पर छोड़ दो, जिसे वह अपने नियम के अनुसार करे। तुम अपना, मेरा, तेरा पना उसके कार्य्य में सम्मिलित न करो। यदि तुम में यह गुण है तो तुमको संसार में प्राकृतिक स्वतंत्रता प्राप्त है और यदि इससे उत्तम मोक्ष का चित्र तुम्हारे हृदय व मस्तिष्क या तुम्हारी धार्मिक पुस्तकों में है तो लाओ मैं भी एक दृष्टि डाल लूँ।

'नन्दू भाई जी निज़ामाबाद (दकन) का पत्र लल्ला भय्या के नाम'

जिस बात की इच्छा सच्चे हृदय से होती है वह अवश्य पूर्ण होकर रहती है। जिस समय मनुष्य में सच्ची तलब होगी, सच्ची तड़प होगी, प्रकृति माता उसके पूर्ण करने का स्वयम् प्रबन्ध करेगी। हृदय में केवल सच्ची इच्छा के उत्पन्न होने की देर है, सारी सामग्री स्वयम् ही एकत्र हो जाती है। हृदय पुष्ट हो, संकल्प शक्ति बलवान हो, विश्वास अटल हो तो फिर कौनसी बात है जो विचार करने से प्राप्त न हो सके ? केवल पुष्ट हृदय चाहिए और

इसी दृढ़ता के प्राप्त करने के लिए मनुष्य को क्रिया और अभ्यास की अवस्थाओं से गुज़ारा जाता है। 'मन चंगा तो कठौती में गंगा'। मन के चंगा होने की देर है फिर सब कुछ स्वयम् ही मिल रहता है और वह भी बिना किसी नवीन परिश्रम के प्राप्त हो जाता है।

विचार में बड़ी शक्ति है। विचारों का केन्द्र केवल मनुष्य का मन है। विचार मन ही में उत्पन्न होते हैं। मन इन विचारों को उत्पन्न करके पुष्ट भी करता रहता है। संकल्प विकल्प मन ही में उत्पन्न होते हैं। 'जैसा ख्याल वैसा हाल'। विचार जब उत्पन्न हो होकर पुष्ट और बलवान् हो जाते हैं तब मन शुद्ध हो लेता है। उस समय इसका परिणाम भी मन को प्रसन्न करने वाला होता है। मन में शुभ विचारों को उत्पन्न करके उसे पुष्ट करके चङ्गा कर लो। तब इसका परिणाम भी शानदार होगा, स्थायी होगा और शान्तिदाता होगा (Mind Principle) मनसिद्धान्त ही सब कुछ है, इस रहस्य से मनुष्य अपरिचित हैं। समस्त सिद्धि-शक्तियाँ केवल मन ही में हैं। यदि मन को भली प्रकार समझ लिया जाय तो सब कुछ सरलता से स्वयम् ही समझ में आजायगा। यदि मन को वश में कर लिया जाय तो पिण्ड, अण्ड, ब्रह्माण्ड और शतखण्ड पर क़ाबू मिल जायगा।

दिल अगर है हाथ में, दिलदार दिलवर साथ हैं।
दिल न हो जब हाथ में, क्या हाथ आये हाथ में॥

इसी मन को वश में रखने की शिक्षा सन्त और फ़क़ीर देते हैं। मन की तीन अवस्थायें स्थूल, सूक्ष्म और कारण हैं। इन तीनों पर जिस समय अधिकार प्राप्त हो जाता है तो उसकी शक्ति का क्या ठिकाना है। जिस समय इन तीनों को शुद्ध कर लिया जाता है तो फिर जो चौथी अवस्था है वह निज अवस्था है। उसी को परमपद भी कहते हैं। मन निर्मल और वासना रहित

हो जाता है और कामनाओं और इच्छाओं की गुलामी से मुक्ति मिल जाती है।

"चाह गई चिन्ता मिटी, मनुआँ बेपरवाह।
जाको कछू न चाहिए, सो ही शाहंशाह ॥"

वाली बात है।

"यह मन फटक पिछोड़ ले, सब आपा मिट जाय।
पिंगल होइ पिउ पिउ करै, ताहि काल नहिं खाय ॥"

जब मन वासना रहित हो शुद्ध पवित्र हो जाता है तब यह अवस्था आती है जब मन इन तीनों अवस्थाओं से गुज़रता हुआ, उनका अनुभव प्राप्त करता हुआ लोभ रहित और निस्वार्थ हो जायगा। कोई स्वार्थ अपना शेष न रहेगा। सन्तमत का आदर्श और इष्ट है।

सन्त मत की शिक्षा देने का अधिकार केवल उसी मनुष्य को प्राप्त है जिसका मन दोष रहित और शुद्ध, पवित्र होले। जो निस्वार्थ और निर्लोभी हो और जिसके कार्य में कोई निज-स्वार्थ न हो, उसका कार्य परोपकार के निमित्त हो, वह प्राकृतिक शक्तियों के समान कार्य करे। सूर्य चमकता है, पानी बरसता है, हवा चलती है। इनका कार्य निस्वार्थ है। वह कोई अपने हेतु कार्य नहीं करते। इनका कार्य स्वाभाविक है, प्राकृतिक (Natural) है। ऐसे कार्य से सम्मृद्धि आयेगी। तन-मन सब शुद्ध होंगे:—

'वृक्ष न फूले आपको, नदी न अँचवै नीर।
परमारथ के कारने, संतन धरा शरीर ॥"

सन्त मत निस्वार्थपन का मत है। सन्तमत का प्रचार भी निस्वार्थ रूप से होगा तो वह शानदार और सुफलदायक होगा। मन में किसी प्रकार का निज स्वार्थ न रखकर जब कार्य किया जायगा, वह फूले-फलेगा। स्वार्थ में निर्बलता होती है। निर्बलता ही कार्य को बिगाड़ा करती है। निज-स्वार्थ ही के कारण समस्त

कार्य चौपट हो जाते हैं। इसको भली प्रकार ध्यान में रखकर कार्य करो तब वह कार्य शानदार होगा और फल लायगा।

परमार्थ नाम है निस्वार्थ का, निर्लोभन का। जो मनुष्य किसी स्वार्थ को सम्मुख रख कर कार्य करते हैं वह सफल नहीं होते। यह बात मैंने हजूर दातादयाल के चरणों में आदर पूर्वक घुटने टेक कर सीखी है। हजूर दातादयाल की ज़ात निर्लोभ थी, उनका निज-स्वार्थ कोई न था। उनका कार्य केवल प्राकृतिक ढङ्ग पर होता रहा है, इसलिये सुफल और शानदार रहा जिसका उदाहरण संसार में कहीं नहीं मिलता।

"आँख वालों के लिये सब में अयाँ रहता हूँ।
काम कर जाता हूं, बे नामो निशां रहता हूँ॥"

यह केवल आँख वाले ही देखते हैं। और जिनको दिव्य चक्षु नहीं प्राप्त हैं वह क्या देखेंगे ? और क्यों कर देखेंगे ? सोच समझ कर कार्य करो।

हजूर दातादयाल ने इतने बड़े २ ग्रंथ लिखे हैं और उनको प्रकाशित किया है, वह केवल प्राणी मात्र के लाभार्थ, परोपकारार्थ ही निज उपाकारार्थ नहीं। इसलिये उसमें समृद्धि (बरकत) थी और है। जिस कार्य को निस्वार्थ, निर्लोभ और प्राकृतिक ढङ्ग पर किया जायगा वह शानदार और सफल होगा।

जिसका मन दूषित होगा, जो मन में गदंगी भर कर कार्य करेगा उसके कार्य में गन्दगी रहेगी और वह अपने चारों ओर गदंगी फैलायेगा। इस बात को भली प्रकार ध्यान में रखलो जिससे परमार्थ सरलता पूर्वक हृदय में बैठ जाय, यदि यह बात इस जन्म में, समझ में न आई तो लाख सर पटको कभी भला न होगा और न निज स्वरूप के दर्शन करने का अवसर ही मिलेगा। सोच देखो:—

"जाको दरशन इत्त है, ताको दरशन उत्त।
जाको दरशन इत नहीं, ताको इत्त न उत्त॥"

आपने शिव रात्रि के लिये प्रसाद माँगा था, यह गुरू का प्रसाद है। गुरू वाणी ही गुरू का प्रसाद है। उसको पढ़ो, सोचो, समझो, गुनो, मुनो और जीवन का अंग बनाओ तब जीवन सफल होगा। अपने लिये समृद्धिदाता और दूसरों के लिये लाभ-दायक। यह मेरी वाणी नहीं है, गुरू वाणी है। यदि यह वाणी पसन्द आजाय तो मुन्शीलाल भइया से कहो वह इसे 'मनुष्य-बनो' में प्रकाशित करदें। भला होगा। गुरू सबका कल्याण करें। राधास्वामी।

—◦✕◦—

"मेरा हैदराबाद (दकन) का दौरा"

(ले०—परम दयाल फ़क़ीरचंद जी महाराज)

संत सम्मेलन हनमकुंडा हैदराबाद दकन के सिलसिले में मौज मेरे कर्म भोग के प्रभाव से मुझे वहाँ ले गई। हज़ारों व्यक्तियों ने फूल और हार चढ़ाये, मोटरें सवारी के लिये दीं; सत-संग सुने, प्रभावित हुये, प्रसन्न हुए, वापिस यहाँ आया, अकेला बैठा हूँ, सोचता हूँ अरे! दीवाने फ़क़ीर!! यह मकड़ी का जाला तूने तन लिया। क्या इसमें तू आप फंस तो नहीं रहा है? ऐ मेरे इस संसार के मिलने वाले मित्रो! आज मुझे याद आया कि दाता दयाल (महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज) ने एक उपन्यास "मकड़ी का जाला" लिखा था। उस समय मेरे हृदय में विचार उत्पन्न हुआ कि दाता दयाल ने संभव है कि किसी धार्मिक संस्था का नाम लिये बिना इसके द्वारा उस पर कटाक्ष किया हो अथवा किसी संशोधन की नीयत से हो, इसको सही तौर पर वही जानते होंगे। यह वाक्य इससे सम्बन्धित नहीं था तब भी कहना पड़ा।

सच पूछो मैं इस गुरूपने की वास्तविकता और सचाई को जानने का इच्छुक था। और आज यह कहना चाहता हूं कि यह गुरूपना वास्तव में मकड़ी का जाला ही है। परन्तु सच्चे मानों में जीवों को इस गुरुइज्म के जाल में इस कारण लाया जाता है कि उनको मुक्त किया जाय। मनुष्य अपने अज्ञान और विषय विकार के जीवन और ग़लत विचारों की वजह से भ्रमों और वहमों का शिकार होकर किसी सुख और शान्ती की इच्छा से प्रभावित होकर नाना प्रकार के कर्म, भक्ति और साधन करता रहता है। मेरी समझ में जो कुछ आया वह केवल (Light) प्रकाश और शब्द (Sound) का मार्ग है जिसकी शिक्षा कलयुग में संतमत देता है। राधास्वामी मत या अन्य संतों के मार्ग में आत्मिक और मानसिक उन्नति के लिये और अंत में शान्ति या मोक्ष के लिये सुरत शब्द योग का साधन है। इस योग में Light (प्रकाश) और Sound (शब्द) को मुख्य रखा गया है।

इस संसार के वर्तमान समय में जिस प्रकार हमारे भौतिक सुख (Material world) और आराम हैं उनमें Light (प्रकाश) और Sound (शब्द) के नियमों को अपना कर हम अपनी सांसारिक आवश्यकताओं को पूरा कर रहे हैं। इस भौतिक संसार की Light (प्रकाश) और Sound (शब्द) क्या चीज़ें हैं? यह सब जानते हैं कि स्थूल तत्व (Gross matter) के पाँच तत्वों में से हमारे विज्ञानवेत्ताओं ने इनको पैदा करके भिन्न २ प्रकार से भिन्न २ आकारों में जैसे मशीनरी, हवाई जहाज़, बे तार के तार, टेलीफोन, ग्रामोफोन, टेलीग्राफ़ और बिजली इत्यादि के द्वारा प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार मानसिक जगत में जो हमारे भाव और विचार हैं यह सूक्ष्म प्रकृति हैं इनमें भी अग्नि, जल, वायु, आकाश और पृथ्वी वर्तमान हैं। यदि मनुष्य इस मानसिक प्रकृति की Light (प्रकाश) और Sound

(शब्द) को प्रयोग करने का ढंग जान जाय तो इससे उसका मानसिक जीवन लोक और परलोक सब बन जायें। यह आन्तरिक स्थान फ़क़ीरों और सन्तों ने जिनके नाम सहस दल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न महासुन्न, और भवंवरगुफा रखे हैं क्या यह हमारी मानसिक जगत के केन्द्र (Centre) हैं? परन्तु याद रहे कि जिस प्रकार हम भौतिक संसार की (Light) प्रकाश और (Sound) शब्द से अपनी सांसारिक जीवन की आवश्यकताओं में आसानी पैदा कर रहे हैं वहां साथ ही अपने घृणा, द्वेष, ईर्षा और स्वार्थ के प्रभाव से हम इनको ऐटम बमों, मशीन गनों या अन्य भयानक रूपों में परिवर्तन करके हानिकारक भी बना रहे हैं। इसी प्रकार वह मनुष्य जिसके हृदय में शुभ भावनायें, सुमति और सङ्गति की वासनायें नहीं हैं 'यदि वह साधन करके इन अवस्थाओं से गुज़रेगा तो वह इस आन्तरिक Light (प्रकाश) और Sound (शब्द) से अपना जीवन तथा दूसरों के जीवन को हानिकारक बनायेगा। यह जो कुछ मैं लिख रहा हूँ अपने जीवन के निज अनुभव हैं। मैंने इन्हें हर प्रकार से आज पाया है और यही असली भेद है कि संतों ने भंवरगुफा यानी सोहंग पुरुष तक समस्त को काल और माया की सीमा में रखा है। बिना सत्गुरू यानी सच्ची समझ के प्राप्त किये हुये जो मनुष्य अभ्यास करते हैं वह मेरी इस छोटी बुद्धि के विचार से हानि उठा जाते हैं। कहा गया है:—

'गुरु बिन माला फेरते गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन नाम हराम है जाय पूछो वेद पुरान॥'

यह असली गुरु जो तुमको इस संसार में और मानसिक जगत में Light (प्रकाश) और Sound (शब्द) के द्वारा सुख और शान्ति दे सकता है वह तुम्हारी आस है। दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज का शब्द पढ़ो:—

ढूँढ़ मुझको अपने मन में मैं तो तेरे पास हूं।
मैं न काशी मैं न मथुरा मैं न गिरि कैलास हूँ॥
तू हुआ मेरा तो मैं भी देख तेरा बन गया।
कर भरोसा मेरा मैं ही तेरी सच्ची आस हूँ। (इत्यादि २)

इसलिये मैं अपने कर्म भोग के वस में मजबूर होकर इस मकड़ी के जाले को तनकर (यानी अपने आपको दयाल कह कर) सत्संग कराता हूँ और कहता हूँ कि सच्चाई यह है कि जैसी तुम्हारी आस होगी उस आस की उन्नति (Development तुम्हारा आन्तरिक शब्द और प्रकाश करेंगे। इसलिये सत्संग कुछ अधिक करो जब हर प्रकार से तुम्हारी बात समझ में आजाये फिर अपनी आस को लेकर जैसा कि मैंने अपनी पुस्तक "मानव धर्म प्रकाश" उर्दू हिन्दी में लिखा है भिन्न २ केन्द्रों और आंतरिक स्थानों की Light (प्रकाश) और Sound (शब्द) को देखते और सुनते हुये तुम अपनी आशाओं को प्राप्त कर सकोगे। समय नहीं है वर्ना मैं अधिक व्याख्या करता। मेरे लेखों का अध्ययन करो जिनको मैंने निस्वार्थ और निष्पक्ष होकर अपने जीवन के अनुभवों का वर्णन किया है। मेरे पास ऐसे उदाहरण हैं कि जहां जिन प्राणियों के अन्दर काम की वासनायें थीं और उन्होंने अभ्यास किया है वह ऐसे गिरे कि सँभले नहीं। जिन प्राणियों के अन्दर जिस २ प्रकार की वासनायें रहती हैं वह जिस २ Stage (अवस्था) पर अभ्यास करते हैं उनकी वही वासनायें बढ़ जाती हैं।

मैं जाति का ब्राह्मण हूँ मेरे लिये यह सन्तों का मार्ग एक गूढ़ रहस्य था। चूंकि संतों ने तमाम मन मतांतरों का खंडन किया है, कान सहन नहीं करते थे क्योंकि दादा दयाल (महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज) राधास्वामी मत को सबसे श्रेष्ठ और उच्च कोटि का मानते थे। मैंने सोचा कि आखिर इसमें कोई रहस्य होगा। चाहा इसको समझूँ। समझ गया। और अब उस भेद को

प्रकट करने के लिये इस मकड़ी के जाले (यानी गुरुइज्म) का सहारा लेकर अपने विचारों को प्रकट किया है और मैं उस जाले को, यद्यपि वह जाल है, अन्य समस्त जालों से श्रेष्ठ, उच्च और अच्छा समझता हूँ ।

अब रह गया प्रश्न आवागमन का—आवागमन से मोक्ष भी उनकी ही होती है जो केवल इस आस को लेकर यानी आवागमन से मुक्ति की आस को लेकर, उस कारण प्रकृति जिससे कि हमारी आत्मा बनी है, के श्वेत रंग की Light (प्रकाश) देखते और अनहद शब्द को अपने अन्दर सुनते हैं, परन्तु सफलता तब ही होती है जब वह साथ ही किसी ऐसे पूर्ण पुरुष के प्रभाव भी लेते हों जो आवागमन के वहम से मुक्त हो ।

इस संसार में प्रत्येक मनुष्य न इन्जीनियर हो सकता है न डाक्टर । परन्तु जो मनुष्य इन लोगों की शिक्षा के अनुसार प्रयत्न करते हैं वह उसी सुख को प्राप्त कर सकते हैं जिस सुख को प्राप्त करने के लिये उन्होंने अपना जीवन व्यतीत किया है । रेडियो बनाने वाला भी कोई था । उसने रेडियो बनाकर हमें बता दिया कि इस प्रकार से इन मीटरों पर तुम भिन्न २ Stations स्टेशनों को सुन सकते हो । इसी प्रकार बिजली या अन्य कार्यों के सम्बन्ध में समझलो । इसी नियम के अनुसार जो मनुष्य किसी ऐसे अभ्यासी के, जो स्वयं इन आंतरिक अवस्थाओं में रहता है और आंतरिक प्रकाश और शब्द का पूर्ण रूप बना हुआ है, हित और मति को लेता है और जो उसका संग करता है वह बिना किसी परिश्रम के उसी सुख को प्राप्त कर सकता है जिस सुख के लिये यह आंतरिक अवस्थायें या स्थान या केन्द्र प्रकृति ने बनाये हैं । इसलिये मैं सच्चे साधु, सच्चे संत और सच्चे परम संत का आदर और मान करता हूँ और उनमें श्रद्धा और विश्वास रखता

हूँ। इसी कारण संत मत के नियमों को सच्चा समझता हूँ। इसके अतिरिक्ति स्वामी जी की वाणी है:—

गुरु चेला व्यौहार जगत में झूंठा बरत रहा।
कासे कहूँ खोज नहिं काहू धोके धार रहा॥
गुरु तो लोभ प्रतिष्ठा चाहे शिष स्वार्थ संग आन बँधा।
सच्चा मारग सुरत शब्द का सो अब गुप्त भया॥
गुरु चेला पाखंडी कपटी चौरासी में दोऊ गया।
शब्द सरूपी शब्द अभ्यासी अस गुरु मिले तो पार हुआ॥
सुरतवंत अनुरागी सच्चा ऐसा चेला नाम कहा।
गुरु भी दुर्लभ चेला दुर्लभ कहीं मौज से मेल मिला॥
शब्द सुरत बिन जो गुरु होई ताको छोड़ो पाप कटा।
राधास्वामी यों कह गाई बूझ बचन तब काज सरा॥

तो इस शब्द में बिल्कुल स्पष्ट है कि गुरू या महात्मा शब्द अभ्यासी हो परन्तु सच्चे पुरुष की पहिंचान करनी बड़ी कठिन है क्योंकि यदि एक महात्मा ने (चाहे वह शब्द अभ्यासी हो) किसी विशेष स्वार्थ या आस को दिल में रखकर सतसङ्ग का क्रम जारी किया है तो उसके सङ्ग करने वालों में भी स्वार्थ का आना अवश्यम्भावी है। नियम है जैसी संगत करोगे वैसे हो जाओगे।

मैं साधारण जनता के सतसङ्ग कराने के योग्य तो नहीं रहा परन्तु केवल वर्तमान साधुओं, महात्माओं और संतों को संकेत किये जाता हूँ कि अपने जीवन को नियमित बनाओ नहीं तो तुम्हारे श्रद्धालु भक्त लक्ष्य तक न पहुँच सकेंगे।

नोट—मुझे शिव रात्रि के अवसर पर दयालधाम, डा०—दयालनगर, जि० अलीगढ़ तो अवश्य जाना है लेकिन उज्जैन, अगमधाम, कन्नौज, इटार्सी व अन्य स्थानों के मनुष्य भी बुलाने हैं। यदि मेरे मालिकों ने जिनके यहां जीविकोपार्जन करता हूँ

छुट्टी देदी तो आऊँगा नहीं तो क्षमा चाहता हूँ। इस कर्म क्षेत्र में पेट का प्रश्न आवश्यक है। मैं ये चाहता हूँ कि आप मुझे कष्ट न दें और यदि देना ही चाहते हैं तो आपको मेरे साथ जो एक आदमी रहता है और जो यात्रा में मुझे आराम देता है उसके रेल का किराया और भोजन का प्रबन्ध करना पड़ेगा। मैंने अपनी स्थिति स्पष्ट करदी है कि मेरे पास सिवाय सचाई और प्राकृतिक नियम को समझाने के न कोई वस्तु है और न कुछ मैं दे सकता हूँ। हाँ! आप लोक भाव के अनुसार और विज्ञान के नियम के अनुसार मुझसे ले सकते हैं।

लेख भेजने वाले–मोहनलाल नैयर।

(संत सम्मेलन हनम कुन्डा (दकन) सोमवार ता० ३ जनवरी सन् ५५ रात्रि के ९ बजे, जो वार्षिक निवेदिका पढ़कर सुनाई गई)

"वह दिन कैसा होयगा, गुरू गहेंगे बांह।
अपना कर बैठारि दैं, चरण कमल की छांह॥"

परम पुरुष पूरन धनी हुजूर महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज ने सन् १९१९ में दयालस्वरूप नन्दू भाई जी के साथ लङ्का जाने के अभिप्राय से प्रथमवार दकन का भ्रमण किया और हनमकुंडा आकर भाई पिंगल राधाकृष्णराव जी देशमुख के निवास स्थान पर पधारे। सतसङ्ग कराया। दूसरे दिन प्राचीन देव स्थानों को देखा तदुपरांत यहां से रामेश्वरम् को प्रस्थान किया।

जब दूसरी बार हुजूर दातादयाल हनमकुंडा पधारे इस मकान में प्रवेश किया उस समय यह घर किराये पर लिया गया था और बिकने वाला था। दातादयाल ने एक सूची चन्दे देने

वालों की बनाई और अपने कर कमलों से १०) भेंट किये और थोड़े से ही समय में लगभग ४००) चन्दा प्राप्त होने पर यह मकान सतसङ्ग के लिए खरीद लिया जाकर रजिष्ट्री कराली गई। यह सतसङ्ग का सबसे पहला स्थान है। जिसकी हुजूर दातादयाल ने स्वयं स्थापना की। इसके बाद कई बार हुजूर दातादयाल हनमकुंडा आये। जब आगमन होता था तब लगभग १ हफ्ता तक इसी स्थान पर रहकर सतसङ्ग कराते थे और सैकड़ों भाई बहिन सतसङ्ग से लाभ उठाते थे।

हुजूर दाता दयाल हनमकुन्डा से अक्सर यलंदू जाया करते थे और पूज्य भाई ठा० चन्द्रभानसिंह जी सत्-धाम निवासी के यहां ठहरा करते थे। इसके अतिरिक्त मठवाड़ा केस्वमुद्रम् वोरगम पहाड़, ज़फ़रगढ़ स्थानों पर भी भ्रमण होता रहा और केस्वमुद्रम् में एक सतसङ्ग ग्रह भीस्थापित किया गया जहाँ हर वर्ष शिवरात्रि के अवसर पर उत्सव मनाया जाता है जिला करीमनगर में हुजूराबाद करीम नगर, आरन्दा जगतियाल स्थानों पर दाता दयाल का दौरा हुआ करता था। जगतियाल में एक सतसङ्ग घर स्थापित किया गया जहां हर साल गुरु पूनम के दिन दाता दयाल की यादगार में उत्सव मनाया जाता है।

प्रेमी सज्जनो !

'पहुप मध्य ज्यों वास है व्याप रहा जग मांहि।
संतन मांहीं पाइये, और कहीं कुछ नाहिं॥'

आज का दिन सर्व श्रे ष्ठ है कि जहाँ, पूज्य दयाल स्वरूप पं० फ़क़ीरचंद जी महाराज व पूज्य दयाल स्वरूप नंदू भाई जी सतसङ्ग कराने के लिए पधारे हैं। सतसङ्ग ही असली तीर्थ है। जीवन की उन्नति और सुधार केवल सन्तों के सतसङ्ग से ही प्राप्त हो सकता है।

'सुख देवें दुख को हरें, करें पाप का अन्त।
कहैं कबीर वह कब मिलें, परम सनेही सन्त ॥'

सन्तों, फ़क़ीरों और पूर्ण पुरुषों का १ घन्टे का सतसङ्ग १०० वर्ष की प्रार्थना, भजन व पूजा से कहीं अधिक लाभदायक है। जिसे यह प्राप्त हो जाये वह बड़ा भाग्यवान है कहा भी है कि—

'एक घड़ी आधी घड़ी, आधी में पुनि आध।
तुलसी सङ्गत साधु की, कटें कोटि अपराध ॥'

अग्नि के पास बैठने से गर्मी, जल के पास सर्दी, दीपक से प्रकाश, फूलों से सुगन्धि स्वयं बिना किसी परिश्रम के प्राप्त होती रहती है और हर वस्तु अपने चारों ओर अपने प्रभाव का केन्द्र बनाती है इसी प्रकार सन्तों और फ़क़ीरों में आध्यात्मिकता होना प्राकृतिक नियम है। जो मनुष्य इनके सतसङ्ग का लाभ उठाता है वह यों ही उन प्रभावों को बिना किसी परिश्रम के ग्रहण करता है तथा लाभ उठाता है।

'बे मदद मुरशिद के बातों से पता मिलता नहीं।
गर न हो सौहबत वली की फिर खुदा मिलता नहीं ॥
एक साअ़त की भी सोहबत होती है तस्कीने रूह।
जब न हो सौहबत तो सीधा रास्ता मिलता नहीं॥'

इस पास बैठने का नाम सतसंग है।

ज़िंदा सौहबत असरात, हालात वाक़ात, से ख़ाली नहीं होती।
'तरबियत—तादीब सब सौहबत में है, बहतरी और बरतरी क़ुरबत में है।
रंगो बू बदलेंगे खू बू आयेगी, सौहबते मुरशिद असर दिखलायेगी।
क़लबे मुरशिद मज़रये अल्लाह है, इसमें तवक़ाते फ़लक की राह है।
दीदये दिल से ज़ियारत उनकी हो, ताकि ख़बसे बातिनी सब जायें खो।
आंख पेशानी पै हो उनके नज़र, दिल में आये कीमियाई कुछ असर ॥

जब वो खोलेंगे कभी अपनी ज़ुबाँ, खुल रहेंगे खुद ज़मीनो आस्मां।
रूह उड़ जायेगी पर को खोलकर, आसमानी तबक़ों की लेगी खबर ॥

परम पुरुष पूर्ण धनी हुजूर दाता दयाल जो पूर्ण ज्ञान और पूर्ण विवेक के स्वरूप हैं अब वही पूर्ण दया और पूर्ण प्रेम के रूप में प्रकट होकर अपने सतसङ्ग के लाभ से हमको कृतार्थ कर रहे हैं अब हमको आशा है कि हुजूर महाराज की दया दृष्टि से ही हमारे जीवन की उन्नति होकर हमारी आत्मा अपने आदर्श को जो सुख दुख के परे एक परम सुख है प्राप्त कर लेगी।

पारस में और संत में, यही अंतरो जान।
वह लोहा कंचन करे यह कर ले आप समान ॥

(ठा० पदम सिंह जी पैंशनर)

❀ ग़ज़ल पीरेमुग़ाँ ❀

नाम गुमनामी[१] में है और बे निशानी में निशां।
ज़र्फ़ीयत[२] बे ज़र्फ़ के है, लाज़मानी[३] में ज़मां[४] ॥
चलता हूँ बे पांव के, तै करता हूँ दश्ते[५] फ़नां[६]।
है नज़र बे नज़री में, और बे ज़ुबानो में ज़ुबाँ ॥
अक़्ल बे अक़्ली में है, और बेदिली में दिल मिरा।
हो गये नज़रों से ओझल, यक़ क़लम दोनों जहाँ ॥
जिस जगह घर है मिरा, तामीर[७] है अमरे मुहाल[८]।
बात सच्ची कह रहा हूँ, ६लामकानी में मकाँ ॥
गुमरही में रास्ता करता हूं तै मैं रात दिन।
रहबरी[१०] और रहरवी[११] आसां [१२]हुई हैं बे गुमाँ[१३] ॥
क्या पता अपना बताऊँ, कौन हूँ और क्या हूँ मैं?
बे सरो सामानी में, मैं हूँ यहाँ साहे जहाँ ॥
है अगर ख़्वाहिश कि मुझको, देखो मेरे घर में तुम।
आओ मेरे साथ फिर मैं ले चलूँ तुमको वहाँ ॥
फ़ौक़[१४],तहत[१५] और वस्त[१६] का,रहता नहीं बहमो ख़याल
हैं वहाँ [१७]मादूम बिल्कुल, यह ज़मीनो आसमाँ ॥
[१८]आलमे मस्ती है, मस्ती में है मस्ती का [१९]सरूर।
[२०]जाम मस्ती का पिलाता, है अजब "पीरेमुग़ां" ॥

१–खोजाने में २–अक़्लमन्दी ३–अकाल ४–काल ५–जंगल ६–मृत्यु ७–बनाना ८–कठिन कार्य ६–ना पैदा १०–रास्ता बताना ११–रास्ता चलना १२–सरल १३–बेशुबा १४–ऊपर १५–नीचे १६–बीच १७–मिटे हुये १८–जगह १९–खुमार २०–प्याला

* विनती *

मैं हूँ भूली भरमी भटकी, आय पड़ी संसारा।
गले में फांसी जम की पड़ गई, कैसे पाऊँ छुटकारा॥
काम, क्रोध, मद लोभ फँसानी, व्यापा मन हिन्कारा।
पर निन्दा और द्वेष, ईर्षा, मेरे गले के हारा॥
मैं अज्ञान के बस में आई, अपना रूप बिसारा।
मैं हूँ कौन मेरा कुल क्या है, कभी न चित से विचारा॥
दुखी हूँ चैन शांति खोकर, काल कर्म ने मारा।
कैसी करूँ उपाय न सूझे, सोचूँ बारम्बारा॥
बिलपत तलपत दौड़ कर आई, सतगुरु के दरबारा।
राधास्वामी मुझे बचाओ, देकर अपना सहारा॥

नोट—यदि संतों के चित्रों की आवश्यकता हो तो प्रेमी भाई श्यामराव ८३४ नन्दूकुटिया (नाम पल्ली) (लाल टीकरी) हैदराबाद (दकन) से पत्र व्यवहार करें।

मनुष्य बनो के नियम ।

(१) शारीरिक, मानसिक और अध्यात्मकता के उसूलों का असली दृष्टि कोण से प्रचार करना और प्रेम, अदब, शिष्टाचार, जब्त और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है।

(२) सन्त, महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

(३) सामाजिक, उन्नति कारक तथा देश हित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

(४) किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जावेंगे।

(५) यह पत्र हर माह की १५ ता० को प्रकाशित हुआ करेगा।

(६) लेखों को घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय ।

(७) ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ २ लिखना चाहिये। उत्तर के लिए जबाबी कार्ड आना चाहिये।

(८) यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहिले अपने यहां डाकखानेमें पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले वह अगला अङ्क निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुँचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य जासकेगी अन्यथा नहीं

(९) नमूना ।) के टिकट मिलने पर भेजा जा सकेगा

(१०) एक बर्ष से कम के ग्राहक नहीं बनाए जायेंगे।

(११) प्रबंध सम्बधी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनिआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहिये।

मैनेजर—मुन्शीलाल गोदिल (खुश दिल)

"मनुष्य बनो कार्यालय"

(दयाल कम्पाउण्ड, पेच जामाजी)

उदयसिंह जैन रोड, अलीगढ़ (उ० प्र०

... बनो (हिन्दी) ||=)
(२) विश्व शांति ,, |)
(३) मानव धर्म प्रकाश उर्दू,हिन्दी१||)
विश्व प्रेमी उर्दू ||)
(४) फ़क़ीर शब्दावली ,, |=)
(५) संतविद्याप्रकाश ,, |=)
(६) इब्राहीम अधम ,, ||=)
(७) एक फ़कीर की घोषणा
डाक खर्च सप्रेम अमल ...
(८) एक नादान और दाना ...
फ़क़ीर की जीवनी हिन्दी |)
(९) नय्यरे अनवर उर्दू |||)
(१०) आवागमन ,, |||)
(११) सदाये फ़कीर ,, |=)
(१२) हयाते नौ ,, |)
(१३) Truth by a true Faqir in English |=)
(१४) Real Independence |)
(१५) Independence Day Leaflets =)
(१६) महारामायण हिन्दी ३||), ५)
(१७) ,, ,, सिद्धि अनभव खंड १||)
(१८) विष्णु संहिता हिन्दी १||)
(१९) शिव संहिता ,, १||)
(२०) दयाल संहिता उर्दू |||)
(२१) सुमेरू हिंदी १||)
(२२) गुटका शब्द संग्रह हिन्दी |)
(२३) योगी हिन्दी ≡)
(२४) शगुन विद्या हिंदी =)
(२५) दस अवतार तिरङ्गा =)
(२६) परमार्थ सुधार |||)
(२७) उन्नति मार्ग |
(२८) विश्व हितैषी उर्दू १||)
(२९) तरक्की का राज उर्दू |=)
(३०) ५० वर्षीय अनुभव हिंदी ||)
(31) Light on Anand Yog १||)
(32) Message of Peace ||=)

प्रकाशक व मैनेजर-मुन्शीलाल गोविल,
[खुश दिल]
"मनुष्य बनो" कार्यालय
(दयाल कम्पाउण्ड, पेच जामाजी)
यू०एस०जैन रोड अलीगढ़ [उ० प्र०]

If undelivered please return to—
"मनुष्य बनो" कार्यालय R.S.
दयाल कम्पाउण्ड, पेच जामाजी, अलीगढ़ (उ० प्र०)

ग्राहक संख्या 22

श्रीमान् Dr. Bankat Prasad
Gagan Mahal Road
Domalguda
Hydrabad

HYDERABAD 15